प्रवाहित हो रही थी। फिर तुम तैयार हो गये, मां की जीवन-ऊर्जा की जरूरत न रही, तो नाल काट दी गई। तुम मां के गर्भ से बाहर आ गये। लेकिन तुम्हारी नाभि से एक अदृश्य नाल अभी भी परमात्मा से जुड़ी है। एक रजतरेखा तुम्हें जोड़े हुए है अस्तित्व से। तुम नाभि से ही जुड़े हो। नाभि में ही तुम्हारी जड़ है। न केवल शरीर के अर्थों में तुम नाभि से जुड़े हो। आत्मा के अर्थों में भी तुम नाभि से ही जुड़े हो।

जिन लोगों को कभी शरीर के बाहर जाने का अनुभव हुआ है—कई बार हो जाता है, कभी दुर्घटना में हो जाता है कि कोई आदमी ट्रेन से गिर पड़ा और उस झटके में उसकी आत्मा शरीर के बाहर निकल गई—तो जिन लोगों को भी ऐसा अनुभव हुआ है दुर्घटना में, या योग की साधना में, या जान-बूझकर जो प्रयोग कर रहे थे शरीर के बाहर जाने का, उन सभी को एक बात दिखाई पड़ी है, और वह यह कि उनकी आत्मा कितनी ही दूर चली जाए, एक रजत-रेखा नाभि से जुड़ी ही रहती है। अगर वह टूट जाये, फिर वापस शरीर में लौटने का उपाय नहीं रह जाता। वह कितनी ही ऊंचाई पर उड़ जाये, लेकिन वह रजत-रेखा बड़ी लोचपूर्ण है, वह खिंचती जाती है। वह कोई पदार्थ नहीं है; वह सिर्फ शुद्ध विद्युत-ऊर्जा है, इसलिए शुभ्र चांदी की भांति दिखाई पड़ती है।

तुम्हारी नाभि में तुम्हारे जीवन का सारा राज छिपा है। इसलिए कबीर ने 'कस्तूरी कुंडल बसै' यह प्रतीक चुना है। और घटना वही घट रही है जो मृग के साथ घटती है। मृग बिलकुल पागल हो जाता है, टकरा लेता है सिर को जगह-जगह, लहूलुहान हो जाता है। और इतनी मादक गंध आती है, रुक भी नहीं सकता; खोजना चाहता है, कहां से गंध आती है। जितना भागता है उतना ही व्याकुल होता है। और जितना भागता है उतनी ही जगह उसकी गंध व्याप्त हो जाती है। उतना ही और भी दिग्भ्रम पैदा होने लगता है कि कहां से आ रही है, कि पूरब से कि पश्चिम से कि दक्षिण से। क्या करे यह मृग? इस मृग को कैसे समझायें कि तू बैठ जा, आंख बंद कर ले, भीतर उतर—तेरे भीतर ही गंध का राज छिपा है!

तुम ही आनंद की तलाश में कहां-कहां नहीं घूम लिए हो। कितने चांद-तारों पर नहीं घूम लिए हो। कितनी पृथ्वियां नहीं तुमने नाप डाली हैं। कितने जन्मों की लम्बी यात्रा है। हिंदू कहते हैं, चौरासी करोड़ योनियों में तुम एक ही चीज को खोज रहे हो कि गंध कहां से आ रही है? आनंद कहां से मिलेगा? जीवन का राज कहां छिपा है? परमात्मा कहां है?

और कबीर कहते हैं, 'कस्तूरी कुंडल बसै। तेरा साईं तुज्झ में, जागि सकै तो जाग।'

'ऐसे घट-घट राम हैं'—जैसे कस्तूरी कुंडल के भीतर छिपी है—*'ऐसे घट-घट राम हैं, दुनिया देखै नाहिं।'*

— ओशो

सुनो भई साधो, बीसवां प्रवचन

(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)

परमात्मा नर्तक है

नाचो अहोभाव से

परमात्मा नर्तक की भांति अपनी सृष्टि से जुड़ा है, मूर्तिकार की भांति नहीं। यह सृष्टि उसका ही होना है। यह तुम्हें खयाल में आ जाये तो तुम व्यर्थ भागने के विचारों से बच जाओगे और तुम जहां हो वहीं खोज शुरू कर दोगे

'अछै पुरुष इक पेड़ है, निरंजन वाकी डार।
तिरदेवा साखा भए, पात भया संसार।।'

कबीर कहते हैं कि वह जो अक्षय पुरुष है, वही इस सारे अस्तित्व का फैलाव है। यह सारा वृक्ष उसी का है। प्रतीक है कि अक्षय पुरुष जैसे एक अक्षय वट है : सारा फैलाव एक वृक्ष की भांति है; डार-डार उसी अक्षय पुरुष की निरंजनता फैली है।

निरंजन का अर्थ होता है : परम वैराग्य। निरंजन का अर्थ होता है, जिसको कोई रंग, रंग नहीं पाता; जो सब रंगों में है, और अनरंगा रह जाता है। निरंजन का अर्थ होता है : कमलवत्; है पानी में और पानी छू नहीं पाता। उस अक्षय पुरुष का यह फैलाव है अस्तित्व—वृक्ष की भांति वही निरंजन

एक-एक डार में छिपा है। 'तिरदेवा साखा भये'—वही अक्षय पुरुष ब्रह्मा, विष्णु, महेश की शाखाओं में विभाजित हो गया है। वही मारता है, वही जन्माता है, वही चलाता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश उसके ही तीन रूप हैं, तीन चेहरे, पर भीतर छिपा पुरुष एक है।

'पात भया संसार'—और ये जो पत्ते हैं, यही संसार है। कबीर यह कह रहे हैं कि परमात्मा और संसार में फासला नहीं है; ये एक ही चीज के दो ढंग हैं। स्रष्टा और सृष्टि दो नहीं हैं। और पात-पात में भी वही फैला है। तुम उसके ही पात हो। तुम्हारे पत्ते कितने ही अलग दिखायी पड़ रहे हों, तुम इस भ्रांति में मत पड़ना कि तुम अलग हो। अलग तो तुम हो ही नहीं सकते। एक क्षण तुम जी नहीं सकते अलग होकर। अनंत-अनंत मार्गों से तुम उससे जुड़े हो। प्रतिपल श्वास ले रहे हो : श्वास काट दी जाये, एक द्वार टूट गया, एक सेतु मिट गया—कैसे जिओगे? सूरज की किरणें चली आ रही हैं, तुम्हारे रोयें-रोयें को, जीवन को उत्ताप से भर रही है; सूरज ठंडा हो जाये, तुम कैसे जिओगे? ये तो स्थूल बातें हैं। ऐसे ही सूक्ष्म तल से सब तरफ से परमात्मा तुम्हें सम्हाले हुए है जैसे वृक्ष को अदृश्य जड़ें सम्हाले होती हैं। और वृक्ष पत्ते-पत्ते की फिक्र कर रहा है। तो घबड़ाओ मत कि तुम पत्ते हो और संसार में हो—संसार भी उसी का है। सृष्टि और स्रष्टा दो नहीं हैं; सृष्टि, स्रष्टा का ही फैलाव है।

इंच भर भी यहां-वहां जाने की जरूरत नहीं है। दुकान पर बैठे-बैठे मिलन होगा। दफ्तर में काम करते-करते मिलन होगा। बगीचे में गड्ढा खोदते-खोदते मिलन होगा। घर को, गृहस्थी को संभालते-संभालते मिलन होगा, क्योंकि वही हर पत्ते में छिपा है।

'अछै पुरुष इक पेड़ है, निरंजन वाकी डार। तिरदेवा साखा

इसे बहुत गहनता से समझ लो, क्योंकि विषाक्त करने वाले लोगों ने बड़ी भ्रांतियां फैला रखी हैं। वे कहते हैं, संसार पाप है। वे कहते हैं, संसार छोड़ने योग्य है, वे कहते हैं, भागो ससांर से अगर परमात्मा को पाना है। परमात्मा संसार के कण-कण में छिपा है, और तथाकथित महात्मा समझाये जाते हैं कि भागो संसार से, अगर परमात्मा को पाना है। और अगर संसार में वही छिपा है तो तुम जहां भी भागोगे, तुम परमात्मा से ही भाग रहे हो। इसलिए मैं तुमसे कहता हूं, तुम जहां हो ठीक वहीं उससे मिलन होगा; इंच भर भी यहां-वहां जाने की जरूरत नहीं है। दुकान पर बैठे-बैठे मिलन होगा। दफ्तर में काम करते-करते मिलन होगा। बगीचे में गड्ढा खोदते-खोदते मिलन होगा। घर, को गृहस्थी को संभालते-संभालते मिलन होगा, क्योंकि वही हर पत्ते में छिपा है। ऐसी कोई जगह नहीं है जहां वह न हो।

रवीन्द्रनाथ ने एक बड़ी मधुर कविता लिखी है। लिखा है कि बुद्ध ज्ञानी हुए और वापस लौटे। रवीन्द्रनाथ के मन में कहीं न कहीं बुद्ध का घर छोड़कर जाना, कभी जंचा नहीं। रवीन्द्रनाथ को कभी जंचा नहीं। किसी कवि को कभी जंच नहीं सकता। थोड़ा कठोर मालूम पड़ता है, थोड़ा काव्य-विरोधी मालूम पड़ता है, थोड़ा सौंदर्य का विनाशक मालूम पड़ता है। और कवि के लिए तो सौंदर्य ही सत्य है। यशोधरा को छोड़कर भाग गये बुद्ध की प्रतिमा रवीन्द्रनाथ को कभी भायी नहीं। तो उन्होंने बड़ी मीठी कविता लिखी है। वह कविता है : लौट आये बुद्ध घर, ज्ञान को उपलब्ध होकर, यशोधरा ने पूछा, "एक ही बात मुझे पूछनी है और बारह वर्ष तक इसी बात को पूछने के लिए मैं प्रतीक्षा करती रही हूं। अब आप आ गये हैं, ज्ञान को उपलब्ध होकर, अब मैं समझती हूं कि समय आ गया है, मैं पूछ लूं। पूछना मुझे है कि जो तुमने मुझे छोड़कर वहां जंगल में पाया, क्या तुम उसे यहीं नहीं पा सकते थे?"

रवीन्द्रनाथ ने बुद्ध को चुप छोड़ दिया है, उत्तर नहीं दिलवाया। पर रवीन्द्रनाथ का उत्तर साफ है, और चुप रह जाने में भी उत्तर साफ है। अब तो बुद्ध भी जानते हैं कि उसे, जो पाया है जंगल में, उसे यहीं पाया जा सकता था।

स्रष्टा छिपा है अपनी सृष्टि में। यह सृष्टि ऐसी नहीं है कि जैसे मूर्तिकार मूर्ति को बनाता है, क्योंकि मूर्तिकार मूर्ति को बनाकर मूर्ति से अलग हो जाता है; या कवि कविता बनाता है, कविता अलग हो जाती है, कवि अलग हो जाता है। कवि तो मर जायेगा, कविता बनी रहेगी। मूर्ति हजारों साल जी लेगी, मूर्तिकार तो चला जायेगा। दोनों अलग हो गये। नहीं, परमात्मा की यह सृष्टि कुछ और तरह की है। इसलिए हमने परमात्मा के प्रतीक की तरह नटराज को चुना है—नर्तक; मूर्तिकार नहीं, चित्रकार नहीं, कवि नहीं। परमात्मा नर्तक है, क्योंकि नृत्य और नर्तक को अलग नहीं किया जा सकता। नर्तक चला गया, नृत्य भी गया। तुम नृत्य को नहीं बचा सकते अलग। तुम नर्तक और नृत्य को अलग कहां करोगे? उनके बीच में कोई फासला नहीं हो सकता। परमात्मा नर्तक की भांति अपनी सृष्टि से जुड़ा है, मूर्तिकार की भांति नहीं। यह सृष्टि उसका ही होना है। यह तुम्हें खयाल में आ जाये तो तुम व्यर्थ भागने के विचारों से बच जाओगे और तुम जहां हो वहीं खोज शुरू कर दोगे। तुम जिस

जगह खड़े हो, वहीं और वहीं हीरा गड़ा है, कहीं और खोजने मत जाओ।

मैंने एक बड़ी अद्‌भुत कहानी सुनी है। एक यहूदी फकीर था। उसने रात सपना देखा। एक रात देखा, दूसरी रात देखा, तीसरी रात देखा—तब सपना सच मालूम होने लगा। सपना यह था कि जिस देश में वह रहता था उस देश की राजधानी में एक पुल के पास एक बहुमूल्य खजाना गड़ा है। जब तीन बार, बार-बार देखा और सब चीज बिलकुल साफ हो गई, नक्शा भी साफ हो गया; एक-एक चीज स्पष्ट हो गई तो मजबूरी में उसे यात्रा करनी पड़ी राजधानी की। वह राजधानी गया, लेकिन बड़ी मुश्किल में पड़ गया; क्योंकि जहां धन गड़ा है पुल के किनारे, वहां चौबीस घंटे पुलिस तैनात रहती है पुल की रक्षा के लिए। तो वह कैसे उसे खोदे? कब खोदे? वहां से कभी पुलिस हटती नहीं। जब दूसरे लोग पहरे पर आ जाते हैं, तब पहले लोग जाते हैं। चौबीस घंटे सतत वहां पहरा है। तो वह राह खोजने के लिए बार-बार पुल पर गुजरता है। एक पुलिसवाला उसे देखता रहा है। आखिर उसने कहा, 'सुन भाई, तू क्यों यहां बार-बार गुजरता है? आत्महत्या करनी है? पुल से कूदना है? क्या इरादा है? फकीर है, तो दिखता भी है ऐसा कि उदास है और जिन्दगी से निराश है, शायद मौका देख रहा है कूद जाने का या कोई और कारण है—बात क्या है? संदेह पैदा होता है।

उस फकीर ने कहा, 'जब तुमने पूछ लिया तो मैं बता ही दूं, क्योंकि रास्ता भी दिखाई नहीं पड़ता कुछ करने का; तुमसे ही कह दूं, शायद तुम्हारे काम पड़ जाये। मैंने एक सपना देखा, तीन बार देखा सतत देखा और जहां खड़े हो वहां जमीन में बड़ा खजाना गड़ा है।'

वह सिपाही हंसने लगा। उसने कहा, 'हद हो गयी। सपना तो हमको भी तीन रात से आ रहा है लेकिन यहां का नहीं आ रहा है।' एक छोटे से गांव का उसने नाम लिया। फकीर चौंका, वह तो उसका गांव है। 'एक फकीर के घर में...' और वह तो उसी फकीर का नाम है। और जहां वह फकीर बैठकर माला जपता रहता है, वहां खजाना गड़ा है। उसने कहा, 'तीन रात से हमको भी आ रहा है। मगर सपना सपना है। ऐसे हम तुम्हारे जैसे झंझटों में नहीं पड़ते कि कभी यात्रा करें, उस गांव जायें। पागलपन में मत पड़ो।'

फकीर भागा घर की तरफ कि यह तो हद हो गयी। जहां बैठा था, खोजा—खजाना वहां था।

कहानी पता नहीं, सच है या झूठ, पर जीवन में ऐसा ही है : तुम जहां हो, खजाना वहीं गड़ा है। सपना आयेगा—हिमालय चले जाओ, खजाना वहां है। सपना आयेगा—मक्का, मदीना, काशी, गिरनार : कई तरह के सपने आयेंगे—उनसे बचना। तुम जहां हो, वहीं खजाना है। क्योंकि अगर तुम हिमालय पहुंचे तो हिमालय में जो बैठा है, वह तुमको बताएगा कि हमको तो सपना आ रहा है कि पूना, कि खजाना वहां बंट रहा है।

परमात्मा सब जगह है, इसलिए कहीं जाने की जरूरत नहीं है। तुम जहां हो, जैसे हो, और परमात्मा की उपलब्धि बेशर्त है, अनकंडिशनल

कवि तो मर जायेगा, कविता बनी रहेगी। मूर्ति हजारों साल जी लेगी, मूर्तिकार तो चला जायेगा। दोनों अलग हो गये। नहीं, परमात्मा की यह सृष्टि कुछ और तरह की है। इसलिए हमने परमात्मा के प्रतीक की तरह नटराज को चुना है—नर्तक; मूर्तिकार नहीं, चित्रकार नहीं, कवि नहीं

है। परमात्मा तुमसे यह भी नहीं कहता कि तुम ऐसा करो कि तब मैं तुम्हें उपलब्ध होऊंगा। क्योंकि जब उसने ही तुम्हें बनाया है तब इससे ज्यादा सुंदर और क्या अपेक्षा हो सकती है? इसे थोड़ा सोचो। अगर परमात्मा ने ही तुम्हें गढ़ा है, तो अब तुम इसमें और सुधार न कर पाओगे। मैंने किसी आदमी को

सुधरते नहीं देखा। और मैं हजारों के साथ संलग्न हूं और वे सब सुधार के लिए मेरे पास आते हैं; लेकिन मैंने कभी किसी आदमी को सुधरते नहीं देखा। इससे मैं निराश नहीं हूं; इससे केवल एक सत्य की उद्घोषणा होती है कि परमात्मा ने तुम्हें बनाया है अब तुम उसमें सुधार करने की कोशिश क्या करोगे? कोई सुधार नहीं सकता; परमात्मा से और ज्यादा सुधारने का उपाय भी नहीं है। जितना किया जा सकता था, वह कर ही चुका है। उसकी कोई शर्त नहीं है कि तुम ऐसे हो जाओ कि ब्रह्मचर्य ग्रहण करो, कि उपवास करो, कि यह करो, कि वह करो, तब मैं तुम्हें उपलब्ध होऊंगा। वह तुम्हें उपलब्ध ही है—प्रसाद की भांति। प्रसाद में कोई शर्त थोड़े ही होती है। वह देने को राजी है। अड़चन इतनी है कि तुम लेने को राजी नहीं हो। कोई शर्त नहीं है, सिर्फ तुम लेने को राजी नहीं हो। तुम इतने अकड़ से भरे हो कि तुम लेनेवाले बनना ही नहीं चाहते—बस, इतनी ही कठिनाई है। और वह एक गहरी मजाक है।

और परमात्मा मजाक कर सकता है, यह बात मुझे बड़ा सुख देती है। क्योंकि मैं किसी गुरु-गंभीर परमात्मा में भरोसा नहीं करता। परमात्मा गुरु-गंभीर होता तो संसार हो ही नहीं सकता। परमात्मा निश्चित ही हल्का और प्रसन्न, प्रफुल्ल, उत्सव—ऐसा कुछ है।

कहावत है अरब में कि जब भी वह किसी को बनाकर संसार में भेजता है तो उसके कान में यह कह देता है कि तुझसे बेहतर आदमी मैंने बनाया ही नहीं। मगर सभी से वह यही कह देता है। और हर आदमी इसी को खयाल में रखे भटकता है। यह एक गहरी मजाक है; और परमात्मा करता है, इससे दुनिया में रस है।

कहावत है अरब में कि जब भी वह किसी को बनाकर संसार में भेजता है तो उसके कान में यह कह देता है कि तुझसे बेहतर आदमी मैंने बनाया ही नहीं। मगर सभी से वह यही कह देता है। और हर आदमी इसी को खयाल में रखे भटकता है। यह एक गहरी मजाक है;

जिस दिन तुम जागोगे, और जिस दिन तुम्हारी यह भ्रांति छूट जायेगी। तुम समझ लोगे मजाक को—उसी दिन तुम विनम्र होकर झुक जाओगे। भेंट तैयार है; जन्मों से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। तुम्हारा झुकना भर काफी है। तुम लेने भर के लिए राजी हो जाओ, देने वाला सदा से राजी है।

इस जिंदगी में उलटा हो रहा है, यहां मांगनेवाला तैयार है, दाता कोई भी नहीं। उस दुनिया में ठीक इससे उलटा है। वहां दाता तैयार है, लेनेवाला कोई नहीं। बस तुम अपनी झोली फैला दो। तुम अपने हृदय को खोल कर रख दो, और कह दो परमात्मा से 'जो तेरी मरजी! जैसे तू रखे, वैसा रहेंगे। जैसा तू चलाये, वैसा चलेंगे। जैसा तू बनाये, वैसा बनेंगे।' इसे मैं संन्यास कहता हूं। यह संन्यास की बड़ी अनूठी व्याख्या हो गई; क्योंकि जिसको तुम संन्यासी कहते हो, वह कहता है कि पच्चीस गलतियां है परमात्मा के बनाने में, इनको सुधारूंगा। उसने ऐसा क्यों किया, ऐसा क्यों किया? मैं संन्यास कहता हूं उस राजी हूं तेरी रजा में। तेरी मर्जी अब मेरी मर्जी। अब तू जहां बहाये, वहां मैं बहूंगा। तू अंधेरे में ले जाये, तो तैयार हूं। तू संसार में भेज दे, तो मैं राजी हूं। तू मोक्ष में ले जाये तो मैं राजी हूं। अब मेरी अपनी कोई आकांक्षा नहीं।' इस घड़ी का नाम संन्यास है। इस चित्त-दशा का नाम संन्यास है। और ऐसे अगर तुम तैयार हो, इसी क्षण परमात्मा मिल सकता है। क्योंकि सब जगह वही छिपा है। पात-पात पर उसके हस्ताक्षर हैं। और कबीर कहते हैं, जब तुम ऐसे हालत में आ जाओगे तो क्या घटेगा?

'गगन गरजि बरसै अमी'—सारा गगन गरज रहा है, अमृत बरस रहा है। बादल गहन अमृत को लेकर घने हो गये हैं। चारों तरफ बिजली चमक रही है। चारों तरफ रोशनी ही रोशनी का सागर है। और 'भीजे दास कबीर' और दास कबीर इस अमृत में नाच रहा है। भीग रहा है; इस अमृत को भी पी रहा है; इस अमृत के साथ एक होता जा रहा है।

गगन सदा तैयार है गरजने को, बरसने को। बादल सदा से तुम्हारे सिर पर मंडराते रहे हैं; बिजलियां चमकने को बिलकुल तत्पर खड़ी हैं; मगर दास कबीर राजी नहीं है। बस दास कबीर राजी हो जायें, दास हो जायें—राजी हो गया।

तुम मालिक बने बैठे हो। अहंकार ने सिंहासन पकड़ रखा है—अकड़े हो। तुम्हारी अकड़ के कारण रोशनी तुम्हारे भीतर प्रवेश नहीं कर पाती है। अमृत भी बरसा है तो भी तुम्हें छू नहीं पाता। तुम्हारी अकड़ भयंकर है। जो भी अपनी अकड़ से भरे हैं, वे पहाड़ों की तरह हैं; वर्षा तो होगी लेकिन पानी सब ढल जायेगा, बह जायेगा। जो दास हो रहे, वे झीलों की भांति हैं, गड्ढों की भांति हैं, खाली हैं, शून्य हैं—अमृत से भर जायेंगे।

जरा भी देर नहीं है उसकी तरफ से; अगर देर है तो तुम्हारी तरफ से। और कब तक प्रतीक्षा करनी है? हो जाओ खड़े आकाश के नीचे। बन जाओ दास कबीर। नाचो अहोभाव से! जो उसने दिया है, उसके लिए धन्यवाद दो! और जैसे ही तुमने उसके लिए धन्यवाद दिया, जो उसने दिया है, कि हजारों हाथ से अमृत बरसना शुरू हो जाता है! फिर वह तुम्हें बहुत देता है। क्योंकि अनुगृहीत की ही उपलब्धि है। अनुग्रह ही उसकी तरफ जाने का मार्ग है।

ये सब प्रतीक हैं। इन प्रतीकों के भीतर छिपा हुआ इशारा है, उस इशारे को याद रखना : 'कस्तूरी कुंडल बसै।'

— ओशो

सुनो भई साधो, बीसवां प्रवचन

(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)